Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 13, Issue No. 2, July-2017, ISSN 2230-7540

हिन्दी उपन्यास: सैद्धांन्तिक परिचय

Dr. Hemlata Sharma*

Assistant Professor, J. C. College, Assandh, Karnal, Haryana

----------X----------

उपन्यास शब्द की उत्पत्ति :

'उपन्यास' शब्द 'उप' तथा 'न्यास' के योग से निष्पन्न है। 'उपन्यास' शब्द में उप उपसर्ग है। 'उप' का अर्थ है–निकट। 'न्यास' का अर्थ है–थाती तथा रखा हुआ। इसीलिए उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति के आधार पर इसका अर्थ हुआ 'पास रखी हुई धरोहर' अर्थात् जो हमारे जीवन के किसी कथात्मक रूप को हमारे निकट रखे तथा हमें हमारी कथा प्रतीत हो। उपन्यास के द्वारा लेखक पाठक के समीप अपने अनुभव की कथा और समग्र मानवजीवन का चित्रा प्रकट करता है। 'मानव की विभिन्न परिस्थितियों, अनुभूतियों, रहस्यों तथा वास्तविकताओं का उद्घाटन उपन्यासों के द्वारा होता है। उपन्यास साहित्य की अत्यंत लोकप्रिय एवं विकसनशील विधा है। इस संबंध में महेन्द्र चतुर्वेदी का मत है–'हिन्दी में और हिन्दी में ही नहीं, समस्त आधुनिक भारतीय भाषाओं में सामान्य मत है कि हिन्दी उपन्यास ने अंग्रेजी से प्रेरणा प्राप्त की। हमारे कथा–साहित्य की परम्परा बड़ी प्राचीन और समृद्ध रही है। रामायण–महाभारत तथा परवर्ती लोकप्रिय कथा ग्रन्थों–'वृहद मंजरी', 'कथा सरितसागर', 'बेताल पंचविशतिका', 'पंचतंत्रा', 'जातक कथाएँ', 'हितोपदेश' आदि में कथातत्त्व मौजूद हैं। परन्तु आज ऐसा कोई प्रमाण नहीं है कि आज के उपन्यास को इसी परम्परा का विकसित रूप स्वीकार किया जा सके। निस्संदेह आज का उपन्यास अपने स्वरूप में पश्चिम की प्रेरणा एवं देन हैं। नवल शब्द को लेकर उपन्यास की सार्थकता के लिए डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी की धारणा भी साभिप्राय है–'उपन्यास' वस्तुतः नवल और ताजा साहित्यांग है। उसने नए शब्द के प्रयोग से यह सूचित किया है कि यह साहित्यांश पुरानी कथाओं और आख्यिकाओं से भिन्न जाति का है। यद्यपि यह शब्द पुरानी परम्परा के प्रयोग के अनुकूल नहीं, तथापि उसको उपन्यास की विशिष्ट–परम्परा के साथ रखा जा सकता है।

उपन्यास की परिभाषा और स्वरूप :

भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों ने अपने अनुभवों के आधर पर उपन्यास विध को परिभाषित करने की चेष्टा की है।

भारतीय विद्वानों के मत :

उपन्यास आधुनिक युग का सर्वाधिक मनोरंजक साहित्यांग है। वह समाज की यथार्थ स्थिति को बहुत ही सरल एवं मनोरंजक ढंग से प्रस्तुत करता है। इसकी लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि 'उपन्यास इस युग का बहुत ही लोकप्रिय साहित्य है। शायद ही कोई पढ़ा–लिखा नौजवान इस जमाने में मिले जिसने दो–चार उपन्यास न पढ़े हों। क्योंकि पांच मील दौड़कर रंगशाला में जाने की अपेक्षा पाँच सौ मील दूर से ऐसी किताब मंगा लेना कहीं अधिक आसान हो गया है जो अपना रंगमंच अपने पन्ने में लिए हुए हो। उपन्यास की लोकप्रियता का दूसरा कारण इसकी गद्यात्मकता है। लोगों के परस्पर विचार–विनिमय का एकमात्रा साधन गद्य है। इससंबंध में आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने लिखा है, फउपन्यास का अर्थ गद्यात्मक कृति से लिया जाता है, पद्यबद्ध उपन्यास हुआ नहीं करते। डॉ. भगीरथ मिश्र ने भी उपन्यास को गद्यात्मक काव्य स्वीकार कियाहै 'युग की गतिशील पृष्ठभूमि पर सहज शैली में स्वाभाविक जीवन की एक

पूर्ण व्यापक झांकी प्रस्तुत करने वाला गद्य काव्य उपन्यास है। उपन्यास को मानव जीवन का अभिन्न अंग स्वीकार करते हुए मुंशी प्रेमचंद ने लिखा है–फउपन्यास गद्य साहित्य का वह अंग है, जो मानव के चरित्रों का चित्रा उपस्थित करते हुए उसके जीवन पर प्रकाश डालता है और रहस्यों का उद्घाटन करता है। मुंशी प्रेमचंद के अनुरूप ही डॉ. त्रिभुवन सिंह भी मानते हैं कि फ्मानव जीवन का चित्राण होने के कारण उपन्यास में व्यक्ति के सामाजिक रूप और अलग सामाजिक इकाई के रूप में किए जाने वाले कार्यकलापों का चित्रा किया जाता है। वह व्यक्ति के पूर्ण जीवन का चित्रा उतारने का पक्षपाती है। उपन्यास के बहिरंग तथा अंतरंग पक्ष के बारे में लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय ने कहा है 'मानव जीवन की समग्रता एवं यथार्थ परिवेश ही उपन्यासों में चित्रित होते हैं तथा विराट कैनवास में युगीन जीवन एवं समकालीन जीवन चिंतन के विभिन्न पक्ष उसमें कलात्मक अभिव्यक्ति पाते हैं। अतः स्पष्ट है कि उपन्यास और मानव जीवन में अत्यधिक निकटता है। उपन्यास में युगीन जीवन को उसके स्वाभाविक एवं सहज रूप में उतारा जाता है। उपन्यास में जीवन को गहराई से देखा व परखा जाता है। मानव जीवन की उलझन तथा समाज सापेक्ष सूक्ष्मता का वर्णन जितना उपन्यास में रहता है, उतना साहित्य के किसी अन्य अंग में नहीं।

डॉ. कृष्ण वल्लभ जोशी का मत है कि फउपन्यास कोई गद्य में लिखित विस्तृत कथा नहीं, अपितु जीवन का गद्य है। इसमें किसी काल्पनिक या मानवजीवन से परे विषय के लिए स्थान नहीं है। उपन्यास में लेखक द्वारा भोगे हुए जीवन की अभिव्यक्ति रहती है। जो पाठक को अपना सा लगे डॉ. विनय मोहन शर्मा ने व्यापकता को उपन्यास का आधार माना है। फकथा जब जीवन के एक अंग तक सीमित रहती है, तब वह कहानी और जब उसके व्यापक भाग को घेर लेती है, तब उपन्यास कहलाती है।3 आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार लोगों या किसी जन समाज के मध्य काल की गति के अनुसार जो गूढ़ और चिंत्य परिस्थितियाँ खड़ी होती हैं। उन्हें विस्तृत रूप में प्रकट करना उपन्यास का काम

www.ignited.in

है।4 डॉ. श्यामसुन्दर दास जैसे अन्य कई आलोचकों ने उपन्यास को मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथास्वीकार किया है, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी ने भी उपन्यास को ऐसी गद्य कथा कहा है, जिसमें विशेष कौतुहल उत्पन्न करके कोई ऐसी सत्य या कल्पित कथा

पाश्चात्य विद्वानों के मत :

पश्चिमी विद्वानों ने उपन्यास को मानव जीवन से संबंधित माना है। उपन्यास की परिभाषा को स्पष्ट करते हुए विभिन्न विद्वानों ने अपने मत प्रस्तुत किए हैं–फगद्य को उपन्यास का सम्प्रेषण माध्यम स्वीकार करते हुए अर्नेस्ट बेकर ने घोषित किया है 'उपन्यास का माध्यम गद्य है, पद्य नहीं। बेकर की दृष्टि में गद्य उपन्यास का सशक्त माध्यम है, उपन्यास मानव जीवन के सबसे अधिक निकट है। मानवीय भावनाएँ, इच्छा, आकांक्षाएँ व क्रिया–कलाप आदि को चित्रित करने के लिए गद्य को अपनाता है। ईरा वाल्पफर्ट ने सम्प्रेषण माध्यम गद्य पर बल देते हुए कहा है–फउपन्यास मानव–जीवन एवं भावनाओं का गद्य के माध्यम से प्रस्तुत किया गया अनुवाद मात्रा है।रिचार्ड बर्टन की दृष्टि में फउपन्यास समकालीन मानव जीवन का गद्य में रचित अध्ययन है। उपन्यासकार समाज व मानवजीवन का अध्ययन करता है और उसकी अभिव्यक्ति गद्य के माध्यम से करता है। पफारेस्टर का यह मानना है कि उपन्यास में मनुष्य की अभिव्यक्ति अधिक हो सकती है। फ्मानव जीवन की अभिव्यक्ति की सुविधाओं के कारण ही उपन्यास का क्षेत्रा नाटक के क्षेत्रा से विस्तृत होता है। इस प्रकार पफारेस्टर भी उपन्यास में जीवन की विस्तृत अभिव्यक्ति का समर्थन करते हैं। आर्नल्ड कैटिल ने उपन्यास को यथार्थवादी दृष्टि से देखा है। 'उपन्यास सीमित और यथार्थ पूर्ण जीवन की गद्य गाथा है। उपन्यास में वास्तविक जीवन को गद्यात्मक रूप में अभिव्यक्त किया जाता है।

उपन्यास का स्वरूप :

उपन्यास का स्वरूप निर्धारण करते समय सभी विद्वानों ने किसी–न–किसी रूप में निम्नलिखित तथ्यों को प्रस्तुत किया है–

1. उपन्यास यथार्थ जीवन की कलात्मक अभिव्यक्ति है, यथार्थ से तात्पर्य है, उपन्यास जैसा दिखता है, वैसा ही अनुभव होता है। इस जाने पहचाने जीवन के अनुभव को कल्पित घटनाओं तथा पात्राों के माध्यम से उपन्यासकार रूपायित करता है। यह रूपायन कल्पित होते हुए भी मूलतः यथार्थ है।

2. उपन्यास का मूल तत्त्व मानव चरित्रा है। साधारणजीवन में हम लोगों के चरित्रा के बाह्य पक्ष व आचरण का कुछ अंश देख पाते हैं। जिससे मनुष्य हमारे लिए प्रायः रहस्यमय बना रहता है। उपन्यास में मनुष्य के चरित्रा का बाह्य पक्ष या आचरण तो प्रस्तुत होता ही है, साथ ही उसके मन की विभिन्न परतों का भी विधिवत उद्घाटन होता है।

3. उपन्यास मानव जीवन और मानव चरित्रा की पूरी गाथा कहने का भरसक प्रयत्न करता है। यह यथार्थ जीवन के अधिकतम निकट होने के कारण अन्य विधाओं के शिल्पगत बंधनों से सहज सम्बन्ध रखता है।

4. उपन्यासकार जीवन की कथा कहकर पाठकों की उत्सुकता जगाता है और उस जिज्ञासा का शमन मानवचरित्रा के आंतरिक उद्घाटन तथा परिस्थितियों को प्रकाश में लाकर करता है। इस प्रकार ऊपर से सरस कथा कहते हुए, कथा के भीतर से वह जीवन का गंभीर विश्लेषण करता है।

1.4 उपन्यास के तत्त्व :

जिस प्रकार शरीर के बाह्य ढांचे को सजीवता प्रदान करने वाले विभिन्न अवयवों के अतिरिक्त हृदय, वाणी और बुद्धि महत्त्व रखते हैं उसी प्रकार उपन्यास का बाहरी ढांचा किसी–न–किसी कथा द्वारा निर्मित रहता है परन्तु उस ढांचे को गतिशीलता प्रदान करने वाले कुछ अनिवार्य तत्त्व हैं। प्रारंभकाल से ही तत्त्वों की संख्या विवादास्पद रही है। किसी उपन्यासकार ने घटनाक्रम के माध्यम से मनोरंजकता की कौतुहलवृत्ति को महत्त्व दिया तो किसी ने चरित्रा को प्रभावपूर्ण ढंग से उपस्थित

करने का प्रयास किया है। किसी ने सशक्त कथोपकथनों तथा शैली का प्रयोग कर स्थिति को चित्रित करने की चेष्टा की है तो किसी ने वातावरण की सजीवता को प्रकट किया। गतिशीलता प्रदान करने में तत्त्वों का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। विभिन्न विद्वानों के तत्त्व संबंधी विभिन्न मत इस प्रकार हैं–

वालटर एलन चरित्रा चित्राण को प्रथम स्थान देते हैं। उनके अनुसार चरित्राों के द्वारा ही उपन्यासकार उपन्यास के सामाजिक कर्त्तव्यों का सम्पादन करते हुए पाठकों में सहानुभूतिपूर्ण मर्मज्ञता का उदय करते हैं। आस्टिन वैरेन और रेनेवेलक ने 'थियोरी ऑपफ लिट्रेचर' में उपन्यास की विश्लेषणात्मक आलोचना के अंतर्गत तीन साधक तत्त्वों का वर्णन किया है–कथावस्तु, चरित्रा–चित्राण और सैटिंग। सैटिंग अपनी संकेतात्मक प्रकृति के कारण वातावरण और ध्वनि में परिवर्तित हो जाता है। हिन्दी के उपन्यासकार प्रेमचंद जी ने उपन्यास के तत्त्वों में चरित्रा–चित्राण को विशिष्ट महत्त्व दिया है। 'हिन्दी–उपन्यास साहित्य' में ब्रजरत्नदास ने शैली के स्थान पर रस को प्रमुखता प्रदान की है। उन्होंने कथावस्तु, कथोपकथन, चरित्रा–चित्राण, देशकाल, उद्देश्य तथा रस उपन्यास के छः तत्त्व स्वीकार किए हैं। परन्तु वर्तमान समीक्षाशास्त्राों के अनुरूप उपन्यास के निम्न छः तत्त्व स्वीकार्य हैं। कथानक, चरित्रा–चित्राण, कथोपकथन, देशकाल–वातावरण, भाषा–शैली तथा उद्देश्य।

1.4.1 कथानक :

घटनाओं के विन्यास को कथानक कहा जाता है अर्थात् जब विभिन्न घटनाएँ कार्य–कारण शृंखला में निबद्ध होकर प्रस्तुत होती हैं तो कथानक कहलाती है। कथानक का उपन्यास में वही महत्त्व होता है जो भवन निर्माण में नींव का होता है। कथानक तत्त्व को उपन्यास में इतना अध्कि महत्त्व दिया गया है कि ई.एम. पफास्टर्र जैसे विद्वानों ने कथानक को ही उपन्यास मान लिया है। जिस उपन्यास का कथानक जितना सुगठित और ठोस होता है, वह उपन्यास उतना ही महत्त्वपूर्ण बन जाता है। यह उपन्यासकार पर निर्भर करता है कि वह अपनी योजना शक्ति की सहायता से जो नई सृष्टि करता है। वह विलक्षण होने पर भी सलक्षण और असंगत होने पर भी सुसंगत बन सके। शिपले ने 'कथानक को घटनाओं का वह संगठन माना है,

www.ignited.in

जो भले ही सरल हो या जटिल, जिस पर कथा या नाटक की रचना होती है।

कथानक के प्रकार :

उपन्यास कथा कहने का ढंग है। कहानी के अभाव में उपन्यास का अस्तित्व ही संदेहास्पद बन जाएगा। उपन्यास के माध्यम से कही जाने वाली कथा पाठकों में भिन्न–भिन्न रूपों में स्वीकार्य होती है। कथा रूप में अत्यंत लघु होती है। जिसे अनेक प्रसंगों के साथ जोड़कर उपन्यासकार अपनी कृति को वृहद रूप प्रदान करता है। उपन्यासकार उपन्यास में मुख्यतः दो कथाओं का प्रयोग करता है–

मुख्य कथा :

उपन्यास के प्रधान पात्रा को लेकर चलने वाली कथा को मुख्य कथा की संज्ञा दी जाती है। किसी भी उपन्यास में एक से अधिक मुख्य कथाएँ नहीं होतीं। मुख्य कथा में मूल भाव अथवा विचार मुख्य पात्रा के आधार पर विकसित किया जाता है। उपन्यास का मुख्य पात्रा किसान, भिखारी, राजा या राजवंश का धीरोदात्त पुरुष में से कोई भी हो सकता है। मुख्य पात्रा के लिए पुरुष ही नहीं अपितु स्त्रियाँ भी उपयोगी हुई हैं।

प्रासंगिक कथा :

उपन्यास के प्रमुख पात्राों के सहयोगी पात्राों से संबंधित कथा प्रासंगिक कथा के अंतर्गत आती है। उपन्यास में प्रासंगिक कथा एक भी हो सकती है ओर एक से अधिक भी। प्रासंगिक कथाओं का भी उपन्यास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। विषम से विषम समस्याओं का व्यापक परिवेश में चित्राण प्रासंगिक कथाओं से ही संभव है।

कथानक के गुण :

प्रत्येक रचना का कथानक पृथक् होता है और उसका गुण विशेष ही उसे अन्य उपन्यासों के कथानक से पृथकता प्रदान करता है। कथानक के कुछ परम्परागत गुण स्वीकार किए गए हैं–पारस्परिक सम्बद्धता, मौलिकता, रोचकता तथा स्वाभाविकता।

पारस्परिक सम्बद्धता :

कथानक का सर्वप्रथम आवश्यक गुण उसकी पारस्परिक सम्बद्धता है। कथानक में विविध घटनाओं या कार्यकलापों का संकलन होता है। यदि कथानक में स्पुफट अंश भली प्रकार से शृंखलाबद्ध न हों और उनमें रूपगत एकात्मकता का अभाव हो तो कथानक संगठनात्मकता की दृष्टि से हीन कहा जाएगा। आधुनिक उपन्यासों में कथा की सम्बद्धता का निर्वाह अनिवार्य रूप से नहीं मिलता। उपन्यासों में घटनात्मक शृंखला का अभाव इस कारण भी होता है, क्योंकि उपन्यासकारों के अनुसार मानव जीवन अनिश्चित और अनियोजित गति से प्रवाहमान रहता है।

मौलिकता :

उपन्यास के कथानक का दूसरा गुण मौलिकता है। मौलिकता का अभिप्राय अनुभूतियों की अभिव्यक्ति और सूक्ष्मता से है। उपन्यासकार की दृष्टि में सूक्ष्मता का परिचय सामान्यतः इस प्रकार लगाया जाता है कि वह जीवन के विभिन्न पक्षों से कितनी गहनता से परिचित है और उसकी मूलभूत समस्याओं तथा उनसे संबंधित तथ्यों को किस सीमा तथा किस रूप में सम्मिलित करता है। उपन्यासकार मौलिकता के द्वारा सामान्य कृति को भी विशिष्ट बनाने की क्षमता रखता है। अपनी प्रतिभाशक्ति, जीवनदृष्टि तथा अनुभूत्यात्मक सत्यता आदि को समन्वित कर कथानक को मौलिकता प्रदान कर सकता है। मौलिकता के निर्वहन के लिए लेखक कभी अविद्यमान की कल्पना कर लेता है तो कभी विद्यमान कथा तत्त्व में संशोधन कर देता है।

स्वाभाविकता :

स्वाभाविकता का अर्थ है उपन्यास में वर्णित कथा विश्वसनीय हो। कथानक की घटनाओं का संबंध मानव जीवन से रहता है। जिस प्रकार मानव जीवन प्रिय–अप्रिय, सुखद–दुखद, सुनिश्चित–आकस्मिक, ग्राह्य–अग्राह्य तथा स्वाभाविक और कृत्रिम प्रसंगों और संयोगों का व्यूह है, उसी प्रकार कथानक भी विविध घटनाओं का सुनिर्मित ढांचा है। उपन्यासकार द्वारा प्रस्तुत कथानक

कल्पना की सहायता से निर्मित होता है। उपन्यासकार विविध परिस्थितियों में मानव चरित्रा की प्रतिक्रियाओं का दिग्दर्शन कराने के लिए कल्पना का प्रयोग करता है। कल्पना सृष्टि के पीछे उपन्यासकार का उद्देश्य यही होता है कि वह पाठक के सामने जीवन के ऐसे स्वरूप को चित्रित कर सकें, जो समाज में यथार्थ रूप में विद्यमान है। कथानक में यदि सत्यता नहीं, तो वह कथानक स्वाभाविक नहीं होगा।

पात्रा और चरित्रा–चित्राण :

उपन्यास के प्रमुख तत्त्वों में कथानक के पश्चात् चरित्रा–चित्राण को इसका दूसरा महत्त्वपूर्ण तत्त्व माना जाता है। आधुनिक काल में चरित्रा–चित्राण का महत्त्व कथानक की अपेक्षा अधिक हो गया है। उपन्यास में कथावस्तु को लेकर चलने वाला ही पात्रा कहलाता है। प्रेमचंद जी ने 'उपन्यास को मानव चरित्रा का चित्रा माना है। प्रेमचंद जी की इस उक्ति से उपन्यास में चरित्रा–चित्राण की महत्ता का अंदाजा लगाया जा सकता है। उपन्यास का मूलविषय मनुष्य और उसका जीवन होता है। चरित्रा–चित्राण के माध्यम से उपन्यासकार जीवन के विविध रूपों को उपस्थित करता है। डॉ. सरोजनी त्रिापाठी के अनुसार 'मनुष्य जो कुछ है, वही उसका चरित्रा है'। प्रत्येक मनुष्य दूसरे से भिन्न है। यही भिन्नता उसके व्यक्तित्व का निर्माण करती है। चरित्रा की संरचना करती है। प्राकृतिक तथा शारीरिक अव्यवों में भी सभी मनुष्य न्यूनाधिक रूप में समान होते हैं किन्तु आचार–विचार, आशा–निराशा और मनन–चिंतन की दृष्टि से सर्वथा भिन्न होते हैं। इस भिन्नता का आधार है, मनुष्य की बौद्धिकता। चरित्रा चित्राण की व्याख्या करते हुए एम.एल. रॉबिन्स ने लिखा है–पचरित्रा–चित्राण से यह आशय है कि किसी कथा के पात्राों का अंकन कुछ इस प्रकार की स्वाभाविकता के साथ किया जाए

कि वे निर्जीव पुस्तक के पृष्ठों से परे मूर्त होकर जीवंत वैयक्तिकता ग्रहण कर ले।3 पात्रा का निर्माण काल्पनिक न होकर साक्षात् अनुभव पर आधारित हो, जिससे आदर्श को स्थापित किया जा सके, 'जहाँ चरित्रा–चित्राण स्वाभाविक होता है, वहाँ सब कुछ स्वयं नदी की स्वच्छंद धारा के समान गतिशील होता है। उपन्यासकार स्वयं इस धारा में बहता है, वह धारा को मोड़कर कृत्रिम धारा का रूप नहीं प्रदान करता।

चरित्रा–चित्राण के प्रकार :

उपन्यास मनुष्य की यथार्थताओं से बना एक घर है। जब भी किसी ने इसके लिए लेखनी उठाई वह पात्राों और उनके चरित्रा–चित्राण की समस्या से न बच सका। पात्राों का उपन्यास में होना अनिवार्य बन जाता है, चाहे वह किसी भी प्रकार के हो–स्थिर अथवा गतिशील, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष। उपन्यास में पात्राों का वर्गीकरण विभिन्न रूपों में किया जा सकता है–

कथानक में पात्रा के महत्त्व की दृष्टि से पात्राों का विभाजन दो वर्गों में किया जा सकता है :

1. मुख्य पात्रा
2. गौण पात्रा।

मुख्य पात्रा :

उपन्यास की संपूर्ण कथा मुख्य पात्रा पर निर्भर करती है। उपन्यास में जान डालने वाले मुख्य पात्रा ही होते हें। जो कथानक को गति प्रदान करते हैं तथा विकास पाते हैं। इन पात्राों में नायक–नायिका आते हैं। उपन्यास में जान डालने वाले मुख्य पात्रा ही होते हैं।

गौण पात्रा :

गौण पात्रा मुख्य पात्रा को उभारने में सहायक होते हैं तथा कथानक की स्वाभाविकता की रक्षा करते हैं। गौण पात्रा कथानक के बिखरे हुए तंतुओं को जोड़ने में सहायता प्रदान करते हैं। उपन्यास में प्रासंगिक कथाएँ गौण पात्राों द्वारा कही जाती हैं।

चरित्रा–चित्राण की दृष्टि से पात्राों के दो भेद किए जा सकते हैं–

1. स्थिर पात्रा
2. गतिशील पात्रा

स्थिर पात्रा :

स्थिर पात्रा उपन्यास में आरंभ से लेकर अंत तक एक ही रूप में

दिखाई देते हैं। उपन्यास में विभिन्न परिस्थितियों का उन पर कोई असर नहीं

दिखाई पड़ता। यह अपने उत्तरदायित्व को निभाते हुए उपन्यास में अहम् भूमिका

अदा करते हैं। यह पात्रा किसी न किसी वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत होते हैं। इन पात्राों का परिचय उपन्यासकार को बार–बार नहीं देना पड़ता।

गतिशील पात्रा :

पात्रा कथानक के विकास के साथ बदल जाते हैं। ये वातावरण एवं परिस्थितियों के प्रवाह में विकसित होते हैं। परिवर्तनशील पात्रा भी पाठकों के आकर्षण का केन्द्र बने होते हैं। विशेषतः मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में परिवर्तनशील पात्राों की स्थिति का अवलोकन किया जाता है।

चारित्रिक विशेषताओं की दृष्टि से पात्राों के दो भेद किए गए हैं–

1. व्यक्तिगत पात्रा
2. वर्गगत पात्रा

व्यक्तिगत पात्रा :

जब पात्रा में विशिष्ट गुणों का बाहुल्य होता है, उसे व्यक्तिगत पात्रा कहा जाता है। अपने गुणों के कारण ही ये पात्रा उपन्यास में तथा पाठक के मन पर अमिट छाप छोड़ते हैं। ये पात्रा स्थिर न होकर गतिशील रहते हैं।

वर्गगत पात्रा :

किसी वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्रा विशेष को वर्गगत पात्रा कहते हैं। ये पात्रा उस वर्ग की चारित्रिक विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

चरित्रा–चित्राण के गुण :

उपन्यास में मानव–चरित्रा एवं उसके कार्य–व्यापारों का अधिकाधिक व्यापक, स्पष्ट, स्वाभाविक एवं कलापूर्ण चित्राण होता है। स्वाभाविकता, यथार्थता, भावनात्मक सहृदयता जैसे गुणों का होना अनिवार्य हो जाता है–

सजीवता :

उपन्यास के प्रत्येक पात्रा के व्यापार, विचार और आदर्श में सजीवता का गुण होना आवश्यक है। उपन्यासकार वर्तमान या अतीत जीवन के किसी न किसी वर्ग से उपन्यास के लिए पात्राों का चयन करता है। ये पात्रा युगीन जीवन के भिन्न–भिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। एक से अधिक बार जब किसी विशिष्ट चरित्रा का अंकन उपन्यास में होता है तब यह आवश्यक हो जाता है कि उनमें ऐसी नवीनता निरुपित की जाए, जो पूर्व कथाकार द्वारा चित्रित पात्रा में न हो। ये पात्रा मानव जीवन का अनुकरण करते हुए सजीवता उत्पन्न करने में सक्षम हों।

स्वाभाविकता :

पाठक किसी पात्रा की अनुभूति के प्रति तभी संवेदना रख सकेगा जब उसकी परिस्थिति व परिवेश उसे विश्वसनीय प्रतीत होंगे। डिकिन्स के पात्राों के संबंध में टॉलस्टॉय ने लिखा है, 'वे मेरे निजी पात्रा हैं इससे उसका अभिप्राय है कि उनमें

www.ignited.in

स्वाभाविक गुण है। उपन्यास में आयोजित पात्रों के व्यक्तित्व या चरित्रा के लिए सामान्य रूप से दो व्यावहारिक पक्ष होते हैं–विश्वसनीयता तथा यथार्थता। उपन्यासकार से यह अपेक्षा की जाती है कि वह पात्रों के व्यक्तित्व में इन दोनों पक्षों का स्पष्टीकरण करे।

भाषा शैली :

उपन्यास में भाषा और शैली का अपना विशिष्ट महत्त्व है। उपन्यास की सपफलता या असपफलता भाषा शैली पर निर्भर करती है। उपन्यास की शैली लेखक की व्यक्तिगत रुचि पर निर्भर करती है। अपने अभिनव कथ्य विशिष्ट अनुभवों को वाणी देने के लिए लेखक विभिन्न प्रकार की शैलियों को अपनाता है। उपन्यासों में वर्णनात्मक, आत्मकथात्मक, विश्लेषणात्मक, संबोधन, पत्रात्मक आदि शैलियों की गणना होती है। इन शैलियों का प्रयोग उपन्यासों के आधार पर किया जाता है। कुछ उपन्यासों की रचना इनके मिश्रित रूप द्वारा भी होती है।

इन शैलियों के अतिरिक्त उपन्यास की भाषा प्रसंग, पात्रा एवं परिवेश के अनुरूप होनी चाहिए। सामान्यतः छोटे एवं गठे वाक्य भाषा की सपफलता में सहायक हैं, वही उसमें स्थानीय मुहावरों और लोकोक्तियों का यत्रा–तत्रा प्रयोग उसकी प्रवाहशीलता में सहायक होते हैं।

निष्कर्ष :

उपन्यास और मानव जीवन में अत्यधिक निकटता है। उपन्यास में युगीन जीवन को उसके स्वाभाविक एवं सहज रूप में उतारा जाता है। उपन्यास में जीवन को गहराई से देखा व परखा जाता है। मानव जीवन की उलझन तथा समाज सापेक्ष सूक्ष्मता का वर्णन जितना उपन्यास में रहता है, उतना साहित्य के किसी अन्य अंग में नहीं। हिन्दी के शताधिक साहित्यकारों ने तिलस्मी, जासूसी, राजनीतिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, आंचलिक कोटि के उपन्यासों की रचनाकर इस विधा को समृद्ध करने के साथ–साथ सर्वप्रिय भी बना दिया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

कद्ध आधर ग्रंथ :

मृणाल पाण्डे (2000). रास्तों पर भटकते हुए, राधकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, जी–17, जगतपुरी, दिल्ली–110002

मृणाल पाण्डे (2001). हमका दिया परदेस, राधकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड जी–17, जगतपुरी, दिल्ली–110002

मृणाल पाण्डे (2003). अपनी गवाही, राधकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, जी–17, जगतपुरी, दिल्ली–110002

मृणाल पाण्डे (2010). पटरंगपुर पुराण, राधकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110002

मृणाल पाण्डे देवी (2007). राधकृष्ण प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड, 7/31, अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली–110002

खद्ध सहायक ग्रंथ :

मृणाल पाण्डे (1977). दरम्यान, पराग प्रकाशन, दिल्ली

मृणाल पाण्डे (1978). एक स्त्राी का विदा गीत, राधा कृष्ण प्रकाशन प्रा. लि. 7/31, अंसारी, मार्ग, दरियागंज नई दिल्ली, 110002

मृणाल पाण्डे (1989). एक नीच ट्रेजडी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

मृणाल पाण्डे (1989). शब्दबेधी, राजकमल प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली

Corresponding Author

Dr. Hemlata Sharma*

Assistant Professor, J. C. College, Assandh, Karnal, Haryana

E-Mail – arora.kips@gmail.com